□□□□□ □□□□□□□□□□□

जनसत्ता 7 जून, 2014 : लोकसभा चुनाव में लगभग नश्चिह्न हो जाने के बाद छह जून को माकपा के पोलित ब्यूरो की बैठक हुई,

और सात-आठ जून को केंद्रीय समिति की बैठक होने वाली है। यक्ष प्रश्न यह है कि अभी की परिस्थितियों में वामपंथ क्या करे।

इसी चार जून को माकपा की पश्चिम बंगाल राज्य समिति की बैठक हुई। अखबारों की खबरों के अनुसार, इस बैठक में स्वाभाविक तौर पर कुछ उत्तेजना रही। नेताओं से पद-त्यागने और पूरी समिति के ही बदल देने जैसी बातें भी की गईं। लेकिन सारी बात यहीं पर अटक गई कि अगर नेताओं को हटाया जाना और समितियों को भंग करना ही सारी समस्या का समाधान हो, तो उस ओर बढ़ा जा सकता है। समस्या सिर्फ इतनी-सी नहीं है। सबको हटा कर कुछ नए लोगों को ले आने से ही वामपंथ का आगे का राजनीतिक रास्ता खुलने वाला नहीं है। तब फिर, हर बढ़ी में इस प्रकार के किसी भी रास्ते पर कदम बढ़ाना आत्म-हनन के अलावा और कुछ नहीं होगा।

जहां तक राजनीतिक लाइन का सवाल है, कुछ लोगों ने शायद यह सवाल भी उठाया कि कांग्रेस के प्रति कुछ नरम रुख अपनाने का नुकसान माकपा को उठाना पड़ा है। इस पर पार्टी के महासचिव प्रकाश करात ने संवाददाता सम्मेलन में कहा कि 'पार्टी ने तो इस चुनाव में कांग्रेस को पराजित करने और भाजपा को ठुकराने का आह्वान किया था। पराजित करना और ठुकराना दोनों ही समान रूप से की शब्द हैं, इसलिए एक के प्रति नरम और दूसरे के प्रति की रुख की धारणा का कोई सवाल ही नहीं उठता।'

कुल मिला कर, जो बात सामने आ रही है वह सिर्फ अभी की राजनीतिक लाइन से जुड़ी बात नहीं है। इस पूरे पराभव के कहीं ज्यादा गहरे कारण हैं, और जरूरत उन पर ध्यान देने की है, न कि कुछ अवांतर बातों पर मगजपच्ची की।

हम यहां पर माकपा के मौजूदा नेतृत्व की भारी राजनीतिक भूलों के इतिहास पर नहीं जाना चाहते। इसमें संदेह नहीं कि उन भूलों की वजह से ही माकपा ने एक राजनीतिक पार्टी के नाते अपनी आंतरिक ऊर्जा को गंवाया है। किसी भी जीवंत पार्टी के लिए जरूरी होता है कि उसमें हमेशा तीव्र राजनीतिक सरगर्मियां जारी रहें। एक समय में भारतीय वामपंथ में वृहत्क्रांति के मुद्दों पर, भूमि-सुधार और पंचायती राज के सवालों पर भारी उत्साह-उद्दीपन था। केरल, पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा में माकपा के नेतृत्व की सरकारों के काल में जो बड़े काम किए गए, वे सारे देश के लिए अनुसरणीय माने जाने लगे थे। इसी प्रकार, जनतंत्र की रक्षा और विस्तार से जुड़े भी ऐसे अनेक प्रश्न थे, जिन पर माकपा और वामपंथ ने आंदोलन की नेतृत्वकारी शक्ति की भूमिका अदा की थी।

लेकिन पिछले बीस सालों के घटनाक्रम में कुछ गलत राजनीतिक निर्णयों के कारण माकपा ने एक बड़ी राजनीतिक ताकत के रूप में उभार के अवसरों को गंवा कर अपनी इस आंतरिक ऊर्जा को ही खो दिया।

वर्तमान माकपा नेतृत्व की राजसत्ता के प्रति प्रकट विरक्ति ने जैसे उसे राजनीति से ही विरक्त कर दिया। संसदीय जनतंत्र में बड़ी भूमिका अदा करने की तैयारियों के बजाय उसका वर्तमान नेतृत्व नौकरशाही ढंग से पार्टी की जकड़बंदी में ही मुब्तिला रहा, बिना इस बात की परवाह किए कि इसके राजनीतिक परिणाम क्या होने वाले हैं।

बहरहाल, अभी विचार का विषय है कि भारतीय वामपंथ के लिए आगे क्या?

जहां तक भूमि संघर्ष का सवाल है, ग्रामीण क्षेत्रों में आज यह विषय कितना प्रासंगिक रह गया है, इस पर अध्ययन की जरूरत है। देहातों में भी पूंजीवाद के तेजी से हुए प्रसार से जो सामाजिक परिवर्तन हुए हैं, उन्हें समझने की जरूरत है। उसके एक पहलू- जल, जंगल, जमीन पर कॉरपोरेट के कब्जे- को लेकर एक प्रकार का आंदोलन मेधा पाटकर के नर्मदा बचाओ आंदोलन की तरह के कुछ एनजीओ चला रहे हैं, जो आज आम आदमी पार्टी के झंडे तले राजनीतिक शक्ल ले रहे हैं। वे स्थानीय स्वायत्त संस्थानों के लिए भी वैकल्पिक सोच का मंच प्रदान कर रहे हैं।

देहातों में कॉरपोरेट के प्रवेश को लेकर एक दूसरे प्रकार का सशस्त्र संघर्ष माओवादियों ने छेड़ रखा है। आज के संचार-क्रांति के युग में उस लड़ाई का कोई मायने नहीं दिखाई देता। उलटे शासक दल बड़ी आसानी से उसका इस्तेमाल जनता के जनतांत्रिक आंदोलनों के खिलाफ कर लेता है, जैसा कि पश्चिम बंगाल में सबसे नग्न रूप में देखा गया।

वामपंथी अभी मूलत: ट्रेड यूनियनों के मोर्चे पर ही सबसे अधिक सक्रिय हैं। लेकिन इस क्षेत्र में एक अरसे से शुद्ध अर्थनीतिवाद का बोलबाला है। सरकारी सहूलियतों और नाना कारणों से ट्रेड यूनियन आंदोलन में भी लंबे अरसे से एक प्रकार का निहित स्वार्थ विकसित हो गया है, जिसके कारण इस क्षेत्र में भी वामपंथियों को दूसरी राजनीतिक पार्टियों की प्रतिद्विंद्विता का सामना करना पड़ रहा है। फिर भी, इस क्षेत्र में वामपंथ को आज भी एक बड़ी राजनीतिक ताकत माना जा सकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में जातिवादी पार्टियों ने गरीबों में वामपंथ की जड़ों को जमने नहीं दिया है।

कुल मिला कर, कहा जा सकता है कि वामपंथ के काम का सामाजिक क्षेत्र कुछ सालों में संकुचित हुआ है। ऐसी स्थिति में वामपंथ कैसे अपने लिए आगे का रास्ता बनाएगा?

अगर हम वामपंथ के संकुचित हो रहे सामाजिक आधार की इस पूरी परिघटना पर गहराई से गौर करें तो पाएंगे कि इसकी कोई ठोस वजह नहीं है कि शहरों और देहातों में स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं की जनतांत्रिक राजनीति में वामपंथ की कोई राजनीतिक पैठ न बने। न इसकी कोई वजह है कि जातिवादी पार्टियां वामपंथ के रास्ते की ऐसी बाधा बन जाएं कि जिसे लांघा ही न जा सके।

दरअसल, यह पूरी समस्या वामपंथ की अपनी अंदरूनी समस्या है। तीन राज्यों में अपना वर्चस्व कायम करके अन्य राज्यों, खासतौर पर हिंदीभाषी

प्रदेशों के मामले में उसने कुछ ऐसे मानदंड विकसित कर लि□ कि जैसे उस क्षेत्र में वामपंथ का कभी विस्तार संभव ही नहीं है□ इसके लि□ नवजागरण संबंधी तर्क दि□ ग□, हिंदी प्रदेशों में मध्यवर्ग का सही ढंग से उदय न होना और जातीय चेतना का अभाव, कुल मिलाकर इस क्षेत्र के लोगों के सांस्कृतिक तौर पर पिछ□पन को भी इसके प्रमुख कारण के तौर पर गिनाया गया□

लेकिन आज की क्या स्थिति है? आज स्थिति इस हद तक बदलती जा रही है कि पश्चिम बंगाल और केरल तक में, आने वाले समय में कांग्रेस या तृणमूल कांग्रेस की विफलताओं का पूरा लाभ वामपंथ को ही मिलेगा, इसे निश्चित तौर पर नहीं कहा जा सकता□

और, गहराई से देखने पर जाहिर होगा कि पूरे हिंदीभाषी क्षेत्र में भाजपा के उभार के पीछे ब□ पैमाने पर वहां मध्यवर्ग के उभार की भूमिका है, जिसने जातियों के दायरे को तो□ कर भाजपा के प्रति अपना समर्थन जाहिर किया है□ जबकि मध्यवर्ग का सचेत धर्म-निरपेक्ष हिस्सा वामपंथ की ओर नहीं, आम आदमी पार्टी जैसी पार्टियों की ओर देख रहा है□

मध्यवर्ग के बीच भाजपा का यह प्रभाव कितना स्थायी होगा, यह विचार का विषय है□ रोजगार-विहीन विकास के इस दौर में इसके स्थायी रहने का कोई तार्किक आधार नहीं है□ लेकिन खतरा इस बात का है कि इसके पहले कि मध्यवर्ग भाजपा के मोह से मुक्त हो, भाजपा इसके सहारे आसानी से अपना विस्तार व्यापक किसान जनता के बीच कर सकती है□ उसका प्रतिरोध करने में जातिवादी पार्टियों की असमर्थता इस चुनाव से जाहिर हो चुकी है□ और मध्यवर्ग-किसान जनता की यह धुरी ही आने वाले दिनों में संघ परिवार की फासीवादी राजनीति के लि□ रसद जुटा□गी, इसकी आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता□ इटली के फासीवाद का इतिहास इसी बात की पुष्टि करता है□

मुश्किल सवाल यह है कि आने वाले चंद सालों में ही मध्यवर्ग के जिस ब□ हिस्से का भाजपा से मोहभंग होने की संभावना जताई जा रही है, क्या उसका लाभ उठाने के लि□ भारतीय वामपंथ तैयार है? या, अभी तक जैसा लग रहा है, इसका लाभ स्वाभाविक तौर पर या तो कांग्रेस को मिलेगा, या आम आदमी पार्टी को, अगर वह वास्तव में □क संगठित और समंजित पार्टी का रूप ले पाती है□ इस पूरी जद्दोजहद में वामपंथ कहां है?

माक्र्सवाद समेत वामपंथ को अभी इसी मुद्दे पर सबसे गंभीरता से विचार करने की जरूरत है□ सबसे ज्यादा जरूरत इस बात की है कि वह अपने पूरे सांगठनिक ढांचे को उसकी सालों की जर्जर स्थिति से उबारने का उपक्रम शुरू करे□ अपने जन-संगठनों को चंगा करे, उन पर नौकरशाही नेतृत्व के इशारों पर बैठा दि□ ग□ लुंज-पुंज और अयोग्य लोगों से मुक्त करके उन्हें जनता के विभिन्न तबकों के साथ जीवंत संपर्क के संगठनों में तब्दील करे□ ग्राम्शी ने सही कहा था कि पार्टी के संगठन का ढांचा तैयार कर देने से ही क्रांति नहीं हो जाती□ उन ढांचों को जीवंत रखने में व्यक्तियों की भूमिका प्रमुख होती है□ इस मामले में कुछ सीख तो कॉरपोरेट से भी ली जा सकती है□

पिछले दिनों भारतीय वामपंथ ने जिस चीज को सबसे ज्यादा गंवाया है, वह है बुद्धिजीवियों से अपने जीवंत संबंधों को□ इसके कारण वामपंथी राजनीति में बाहर से न□-न□ विचारों के प्रवेश के रास्ते रुक ग□ हैं, सामाजिक परिवर्तनों की गति के साथ तालमेल बैठाने वाले विचारों का प्रवाह रुक गया है□ आज वामपंथी नेतृत्व के लि□ □क सबसे जरूरी काम है कि वह अपनी अंदरूनी ज□ता को तो□ने के लि□ ही बुद्धिजीवियों के साथ अपने संपर्कों को किसी भी प्रकार से सुदृ□ करे□

सोलहवीं लोकसभा चुनाव के बाद आने वाला समय उतनी राजनीतिक उत्तेजनाओं का नहीं रहेगा। इस समय का पूरा लाभ उठा कर वामपंथ को अपने सांगठनिक ताने-बाने को दुरुस्त करके, जनता के बीच नाना रचनात्मक कर्मों के जरिए बिल्कुल नीचे के स्तर से एक नया नेतृत्व तैयार करने की प्रक्रिया पर बल देना है। जनसंगठनों के संचालन में नेताओं की सनक को पूरी तरह से ठुकराने की जरूरत है।

मार्क्स ने लगभग साढ़े तीन दशक पहले पार्टी को एक जन-क्रांतिकारी पार्टी के रूप में विकसित करने का निर्णय लिया था- जनता के सभी हिस्सों की एक प्रतिनिधित्वमूलक पार्टी।

गुपचुप ढंग से काम करते हुए पार्टी पर अपनी जकड़बंदी कायम करने के लिए उत्साही पार्टी-नेताओं ने 'जन' को दबा कर 'क्रांतिकारी' पर बल देना शुरू कर दिया और इस 'क्रांतिकारिता' के आकर्षण के बल पर पार्टी पर नौकरशाही कमान-प्रणाली आरोपित कर दी। आज पूरा वामपंथ 'जन' से कटे इसी 'क्रांतिकारिता' के रोग के परिणामों को भोग रहा है।

उम्मीद करनी चाहिए कि अपने इस भारी पराभव से भारतीय वामपंथ सबक लेता हुआ 'जन-क्रांतिकारी' संगठन के विकास की ओर ध्यान देगा। वही उसके आगे का रास्ता भी प्रशस्त करेगा।

फेसबुक पेज को लाइक करने के लिए क्लिक करें- https://www.facebook.com/Jansatta

ट्विटर पेज पर फॉलो करने के लिए क्लिक करें- https://twitter.com/Jansatta